Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA

Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

स्वामी दयानन्द सरस्वती की विचारधारा में स्त्री स्वतंत्रताः एक राजनीतिक पुनर्पाठ

डॉ. संजय शर्मा

असिस्टेंट प्रोफेसर राजनीति विज्ञान सहकारी पी.जी. कॉलेज, मिहरावां, जौनपुर, उत्तर प्रदेश
DOI: **https://doi.org/10.57067/ir.v3.i7.631**

सारांश

वेदों की पुनर्व्याख्या के माध्यम से दयानन्द सरस्वती ने सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और मिथ्या धारणाओं के उन्मूलन की बात कही। उन्होंने स्त्रियों के लिए शिक्षा, वैवाहिक स्वतंत्रता, विधवा पुनर्विवाह, धार्मिक अधिकार और सामाजिक भागीदारी की वकालत की।यह अध्ययन स्वामी दयानंद सरस्वती की विचारधारा में निहित स्त्री स्वतंत्रता के मूल्यों का राजनीतिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करता है वह इसको सामाजिक सुधार के साथ–साथ राजनीतिक चेतना और सशक्तिकरण के आधार के रूप में भी देखता है। उनके विचारों में निहित स्वतंत्रता, समानता एवं सामाजिक उत्तरदायित्व के आयामों के परीक्षण से ज्ञात होता है कि उनकी वैदिक दृष्टि भारतीय राजनीतिक चिंतन में स्त्री विमर्श को समझने के लिए एक नवीन वैचारिकी प्रस्तुत करती है।

कुंजी शब्द: *स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्त्री स्वतंत्रता, वैदिक चिंतन, राजनीतिक पुनर्पाठ, महिला अधिकार, लैंगिक समानता, व्यक्तिगत स्वायत्तता, नागरिक संप्रभुता।*

भूमिका

स्त्री–स्वतंत्रता आधुनिक राजनीतिक चिंतन, लोकतांत्रिक व्यवस्था तथा मानवाधिकार विमर्श की एक केंद्रीय अवधारणा है। इसका आशय महिलाओं को सामाजिक बंधनों से मुक्त करने के साथ–साथ उन्हें शिक्षा, समान अवसर, गरिमापूर्ण जीवन, स्वायत्त निर्णय तथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान भागीदारी सुनिश्चित करना है। जॉन स्टुअर्ट मिल का मत है कि किसी भी समाज की वास्तविक प्रगति तब तक संभव नहीं है, जब तक महिलाओं को पुरुषों के समान स्वतंत्रता, अधिकार और अवसर प्राप्त न हों (मिल, 1869, पृ.1)। इसी प्रकार मार्था सी. नुसबाम ने महिलाओं की गरिमा, क्षमता तथा स्वतंत्र जीवन–निर्वाह की योग्यता को न्यायपूर्ण समाज की अनिवार्य शर्त माना है (नुसबाम, 2000, पृ.34)। इस दृष्टि से स्त्री–स्वतंत्रता समानता, न्याय, गरिमा तथा मानवीय अधिकारों की आधारभूत अवधारणा के रूप में स्थापित होती है।

भारतीय चिंतन में स्त्री–स्वतंत्रता का प्रश्न सामाजिक पुनर्निर्माण, नैतिक उत्थान और न्यायपूर्ण समाज की स्थापना से जुड़ा रहा है। महात्मा गांधी का मानना था कि स्त्री और पुरुष समाज रूपी रथ के दो समान पहिए हैं तथा किसी भी राष्ट्र की उन्नति महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के बिना संभव नहीं है (गांधी,1965, वॉल्यूम.15, पृ. 408)। इसी प्रकार डॉ. भीमराव आंबेडकर ने महिलाओं की शिक्षा, समान अधिकार तथा सामाजिक न्याय को लोकतांत्रिक समाज की आधारशिला माना और बताया कि किसी समाज की प्रगति का मूल्यांकन वहाँ की महिलाओं की प्रगति से किया जाना चाहिए (अम्बेडकर,1942, पृ.311)। भारतीय समाज के ऐतिहासिक और दार्शनिक विकास क्रम का विश्लेषण करते हुए अल्तेकर का कहना है कि किसी समाज की वास्तविक प्रगति और उसकी सभ्यता का मूल्यांकन इस बात से होता है कि वह अपनी स्त्रियों को कितनी स्वतंत्रता और अवसर प्रदान करता है (अल्तेकर, 1956, पृ.361)।

इस प्रकार पाश्चात्य तथा भारतीय दोनों वैचारिक परंपराएँ इस तथ्य पर सहमत दिखाई देती हैं कि स्त्री–स्वतंत्रता व्यक्तिगत अधिकार का विषय होने के साथ–साथ, सामाजिक परिवर्तन, लोकतांत्रिक समानता तथा न्यायपूर्ण व्यवस्था की मूलभूत आवश्यकता है। इसी वैचारिक पृष्ठभूमि में भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री–विषयक चिंतन का अध्ययन विशेष महत्त्व प्राप्त करता है। उपरोक्त वैचारिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्त्री–विषयक चिंतन

Received **05 July 2026**; Accepted **27 July 2026**. Available online: **30 July 2026**. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension) This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधारा में एक विशिष्ट स्थान रखता है।

साहित्य की समीक्षा

स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री–विषयक चिंतन और समकालीन राजनीतिक दर्शन में उसकी प्रासंगिकता को गहराई से रेखांकित करने के लिए समालोचनात्मक समीक्षा अनिवार्य है। अध्ययन को गति देने के लिए अध्ययनकर्ता ने निम्नवत साहित्य का अवलोकन किया है :

अग्रवाल एवं यादव (2025): ने 'एन एनालिटिकल एक्सप्लोरेशन ऑफ स्वामी दयानन्द सरस्वतीज एजुकेशनल थॉट एंड सोशल जस्टिस' में यह निष्कर्ष निकाला है कि स्वामी जी का चिंतन पाश्चात्य आधुनिकता की अंधी नकल के खिलाफ एक सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की नींव रखता है। अध्ययनकर्ता के अनुसार, दयानन्द सरस्वती ने 'विधि के शासन' और त्रिस्तरीय विधायी संरचना के अंतर्गत स्त्री को एक संप्रभु और स्वतंत्र नागरिक के रूप में देखने का राजनीतिक नजरिया दिया था। सिंह एवं राणा (2024) : ने अपने शोध 'स्वामी दयानन्द सरस्वती : ए पायनियर ऑफ सोशल हार्मनी' में रेखांकित किया है कि स्वामी जी द्वारा मध्यकालीन रूढ़ियों (जैसे बाल–विवाह और सती प्रथा) का विरोध केवल एक धार्मिक शुद्धि की प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि समाज के हाशिए पर खड़ी कड़ियों (स्त्रियों और वंचितों) को मुख्यधारा में शामिल करने का एक सचेत राजनीतिक प्रयास था। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज ने महिलाओं के संपत्ति और सामाजिक अधिकारों के पुनर्ग्रहण में एक उत्प्रेरक की भूमिका निभाई।

शर्मा (2021) : अपने शोध पत्र 'फेमिनिस्ट डिस्कोर्स एंड द कंटेंपरेरी रिलेवेंस ऑफ दयानन्द' में यह प्रतिपादित करते हैं कि पाश्चात्य नारीवाद के संस्थागत रूप लेने से बहुत पहले, दयानन्द सरस्वती के चिंतन में महिलाओं की 'नैतिक स्वायत्तता' और 'चयन की स्वतंत्रता' के तत्व मौजूद थे। यह अध्ययन प्रस्तुत शोध पत्र के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करता है, क्योंकि यह अध्ययन दयानन्द सरस्वती के वैदिक दर्शन को 'जेंडर जस्टिस' के आधुनिक विमर्श से जोड़ता है। सक्सेना (2014) : ने अपने शोध पत्र 'व्यूज ऑफ दयानन्द एंड विवेकानन्द फॉर वीमेन एजुकेशन' में दोनों विचारकों के शैक्षिक दर्शन का विश्लेषण करते हुए बताया है कि जहाँ दयानन्द सरस्वती ने वेदों को आधार बनाकर महिलाओं के अधिकारों को वैधानिक व संस्थागत ढांचा (गुरुकुल प्रणाली) दिया, वहीं स्वामी विवेकानन्द ने उपनिषदों और वेदांत के अद्वैत सिद्धांत (आत्मा का कोई लिंग नहीं होता) के माध्यम से स्त्री–पुरुष में आंतरिक आध्यात्मिक समानता स्थापित किया।

ऐतिहासिक समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण (किश्वर, 1986. वैदिक, 2020) : मधु किश्वर ने अपने तीखे ऐतिहासिक विश्लेषण में रेखांकित किया कि 19वीं सदी के सुधारकों में दयानन्द अकेले ऐसे विचारक थे जिन्होंने स्त्री अधिकारों के लिए किसी औपनिवेशिक या पाश्चात्य उदारवादी ढांचे की बैशाखी का सहारा नहीं लिया, बल्कि परंपरा के भीतर से ही क्रांतिकारी तत्व खोज निकाले। अपर्णा वैदिक भारत में ऐतिहासिक और सामाजिक हिंसा की पृष्ठभूमि का प्रामाणिक विश्लेषण करती है। लेखिका ने दर्शाया है कि कैसे स्वामी दयानंद सरस्वती की राष्ट्र–राज्य की संकल्पना जनसंख्या की शक्ति (जनसंख्या संप्रभुता) पर केंद्रित थी, जिसमें कुशल और सुशिक्षित नागरिकों के निर्माण की मुख्य जिम्मेदारी स्त्रियों के बौद्धिक सशक्तिकरण पर टिकी हुई थी।

शोध–अंतर

इन नवीनतम साहित्यों की समालोचनात्मक समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि समकालीन शोधकर्ताओं ने स्वामी दयानन्द सरस्वती को सामाजिक सुधारों से आगे बढ़कर राजनीतिक सिद्धांतों और 'जेंडर जस्टिस' की कसौटी पर कसना शुरू तो कर दिया है, किन्तु स्त्री–स्वतंत्रता को एक स्वायत्त राजनीतिक मूल्य मानते हुए दयानन्द सरस्वती के विचारों का संपूर्ण राजनीतिक पुनर्पाठ प्रस्तुत करने वाले शोध ग्रंथों की अभी कमी है। अधिकांश अध्ययन उनके केवल शैक्षिक सुधारों या सामाजिक समरसता के आयामों तक ही सीमित रह जाते हैं। यह शोध पत्र इसी अकादमिक रिक्तता को भरने का एक मौलिक प्रयास है।

शोध की आवश्यकता, प्रासंगिकता एवं उद्देश्य

Received 05 July 2026; Accepted 27 July 2026. Available online: 30 July. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

समकालीन वैश्विक एवं भारतीय समाज में लैंगिक समानता, महिला अधिकार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा महिला सशक्तिकरण लोकतांत्रिक विमर्श के प्रमुख विषय हैं। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री–विषयक विचारों का पुनर्मूल्यांकन समकालीन राजनीतिक एवं सामाजिक संदर्भों में अत्यंत प्रासंगिक है। इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नवत हैं :

• स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित स्त्री–शिक्षा, संपत्ति के अधिकार, विवाह में चयन की स्वतंत्रता और सामाजिक गरिमा का राजनीतिक और दार्शनिक विश्लेषण करना।

• स्वामी जी द्वारा दिए गए वैदिक राष्ट्रवाद के ढांचे के भीतर स्त्री की भूमिका और उसकी राजनीतिक संप्रभुता का मूल्यांकन करना।

• समकालीन पाश्चात्य और भारतीय स्त्री–विमर्श तथा आधुनिक लोकतांत्रिक चिंतन के आलोक में स्वामी दयानन्द सरस्वती के विचारों की प्रासंगिकता और उनकी सीमाओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन पूर्णतः गुणात्मक, ऐतिहासिक तथा दार्शनिक–विश्लेषणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। अध्ययन की प्रामाणिकता और वस्तुनिष्ठता बनाए रखने के लिए शोध सामग्री को दो भागों में विभाजित किया गया है :

• **प्राथमिक स्रोत :** इसके अंतर्गत स्वामी दयानन्द सरस्वती की मूल कृति–सत्यार्थ प्रकाश (1875) तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (1878) का अध्ययन किया गया है।

• **द्वितीयक स्रोत** : इसके अंतर्गत समकालीन राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय शोध–पत्रों, प्रामाणिक संदर्भ ग्रन्थों तथा इस विषय से संबंधित अन्य अकादमिक साहित्यों का सहारा लिया गया है। शोध के व्यावहारिक क्रियान्वयन में उपलब्ध स्रोतों का 'विषयवस्तु विश्लेषण' किया गया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं वैचारिक परिचय

उन्नीसवीं शताब्दी का भारतीय समाज सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक संक्रमण के दौर से गुजर रहा था। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के प्रभाव के साथ–साथ समाज अनेक रूढ़ियों और कुरीतियों से ग्रस्त था, जिनका सबसे अधिक दुष्प्रभाव महिलाओं पर पड़ा (चंद्रा, 2009, पृ. 215)। बाल–विवाह, सती–प्रथा, विधवाओं की दयनीय स्थिति, स्त्री–शिक्षा का अभाव तथा सामाजिक असमानता ने महिलाओं के व्यक्तित्व और अधिकारों को गंभीर रूप से सीमित कर दिया था (फोर्ब्स, 1996,पृ.12)। इन परिस्थितियों ने सामाजिक सुधार आंदोलनों की आवश्यकता को जन्म दिया। राजा राममोहन राय ने सती–प्रथा के विरोध का नेतृत्व किया, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा–विवाह और स्त्री–शिक्षा का समर्थन किया, ज्योतिवा फुले एवं सावित्रीबाई फुले ने बालिका शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाया तथा पंडिता रमाबाई ने महिलाओं की शिक्षा और आत्मनिर्भरता पर विशेष बल दिया। इसी सुधारवादी परंपरा में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक आधार पर स्त्री अधिकारों का समर्थन करते हुए भारतीय समाज में वैचारिक पुनर्जागरण का मार्ग प्रशस्त किया।

स्वामी दयानन्द का विश्वास था कि वेद सार्वभौमिक ज्ञान के स्रोत हैं तथा उनमें स्त्री और पुरुष के मध्य किसी प्रकार के भेदभाव का समर्थन नहीं किया गया है। उन्होंने स्त्री–शिक्षा, वैदिक अध्ययन, धार्मिक अधिकार, विवाह में समानता तथा सामाजिक गरिमा का समर्थन करते हुए महिलाओं की स्वतंत्र और सम्मानजनक भूमिका पर बल दिया। उनके अनुसार शिक्षित एवं जागरूक महिला ही परिवार, समाज और राष्ट्र के विकास में प्रभावी योगदान दे सकती है (सरस्वती, 2012, समुल्लास–3 पृ. 42–45)।

स्वामी दयानन्द सरस्वती की विचारधारा में स्त्री–स्वतंत्रता : एक राजनीतिक पुनर्पाठ

स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री–स्वतंत्रता संबंधी विचारों के अंतर्गत उनके वैदिक, शैक्षणिक, वैवाहिक, जैव–राजनीतिक, राज्य संप्रभुता और राजधर्म के धर्म में स्त्री की स्थिति का अध्ययन किया गया है, जिनका राजनीति–शास्त्रीय विश्लेषण निम्नवत हैं :

स्वामी दयानन्द सरस्वती के चिंतन का वैदिक आधार

Received **05 July 2026**; Accepted **27 July 2026**. Available online: **30 July**. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्त्री–विषयक विमर्श मध्यकालीन कुरीतियों के विरुद्ध केवल एक सामाजिक प्रतिक्रिया होने के साथ–साथ भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक विचारधारा में स्त्री की गरिमा की एक सशक्त दार्शनिक पुनर्संरचना है। उन्होंने अकादमिक और दार्शनिक तर्कों से यह सिद्ध किया कि मूल वैदिक संहिताओं में स्त्री–पुरुष समानता का अकाट्य आधार मौजूद है वहाँ लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार के नागरिक या बौद्धिक स्तरीकरण का निषेध किया गया है। स्वामी जी ने मध्यकालीन स्मृतियों, पुरोहितों द्वारा प्रचारित उन भ्रांतियों और अनर्गल बातों को सिरे से खारिज कर दिया जिन्होंने स्त्रियों को ज्ञान और नागरिक अधिकारों से वंचित कर दिया था। इस संदर्भ में उनका मुख्य स्रोत सत्यार्थ प्रकाश का तृतीय समुल्लास है, जहाँ वे स्पष्ट करते हैं कि वैदिक काल में स्त्रियाँ ऋषिकाएं थीं, शास्त्रार्थ करती थीं और पुरुषों के समानांतर समाज का बौद्धिक व आध्यात्मिक नेतृत्व करती थीं (सरस्वती, 2012, समुल्लास–3,पृ.68–72)। इसके अतिरिक्त, अपनी विशिष्ट सैद्धांतिक कृति ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के पठन–पाठन विषय में वे वेदों के उद्धरणों से यह प्रमाणित करते हैं कि ईश्वर की वाणी (वेद) पर पुरुषों की भांति स्त्रियों का भी पूर्ण, नैसर्गिक और स्वाभाविक अधिकार है (सरस्वती, 1970, पठन–पाठन विषय पृ.79–81)। राजनीति विज्ञान के दृष्टिकोण से, स्वामी जी ने यहाँ स्त्री स्वतंत्रता को किसी सामाजिक दया या याचना के रूप में नहीं, बल्कि वेदों द्वारा प्रदत्त एक 'प्राकृतिक और संप्रभु अधिकार' के रूप में स्थापित किया है।

स्त्री–शिक्षा और बौद्धिक सशक्तिकरण

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी कृति सत्यार्थ प्रकाश में स्त्री–शिक्षा के असाधारण महत्व को रेखांकित करते हुए इसे समाज और राष्ट्र के अभ्युदय की अनिवार्य प्राथमिक शर्त माना। उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त अंधविश्वास पर कड़ा प्रहार किया कि नारी को अक्षर ज्ञान देने से अनिष्ट आता है। उन्होंने दृढ़तापूर्वक महिलाओं के वेदाध्ययन के अधिकार को पुनः बहाल किया। सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में वे गार्गी, मैत्रेयी और सुलभा जैसी विदुषी महिलाओं का ऐतिहासिक उदाहरण देते हुए लिखते हैं कि यदि स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होंगी, तो वे न्याय, धर्म और राष्ट्र–संचालन की बारीकियों को कभी नहीं समझ पाएँगी(सरस्वती, 2012, समुल्लास–3 पृ. 51–52)।

राजनीति विज्ञान के दृष्टिकोण से, स्वामी जी की शिक्षा प्रणाली केवल साक्षरता अभियान नहीं थी, बल्कि महिलाओं का बौद्धिक सशक्तिकरण था। उनके अनुसार, एक शिक्षित महिला की भूमिका केवल गृह–संचालन तक सीमित नहीं है वह परिवार की प्रथम शिक्षिका, समाज की मार्गदर्शक और राष्ट्र की चेतना की संवाहिका है। जब तक आधी आबादी बौद्धिक रूप से सशक्त नहीं होगी, तब तक एक तार्किक नागरिक समाज का निर्माण असंभव है (सरस्वती, 2012, समुल्लास–3 पृ. 51–52)।

स्त्री– अधिकार, विवाह एवं सामाजिक समानता

स्वामी जी ने तत्कालीन हिंदू समाज की पुरुष–सत्तात्मक संरचना को कानूनी, नैतिक और सामाजिक स्तर पर चुनौती दी। उनके चिंतन में विवाह की अवधारणा एक सामाजिक या धार्मिक अधीनता का बंधन नहीं, बल्कि दो स्वतंत्र और वैचारिक रूप से समान व्यक्तियों के बीच की समान साझेदारी है। स्वामी जी का बाल विवाह वैवाहिक आजादी विधवा विवाह और सामाजिक सम्मान के संदर्भ में महत्वपूर्ण तर्क निम्न है :

- **बाल–विवाह का विरोध :** उन्होंने बाल–विवाह को स्त्रियों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक पतन का मुख्य कारण मानते हुए इसका तीव्र विरोध किया और सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में कन्याओं के लिए न्यूनतम आयु 16 वर्ष तथा पुरुषों के लिए 25 वर्ष निर्धारित की (सरस्वती, 2012, समुल्लास–4 पृ. 71–74)।
- **विवाह में स्वायत्तता :** उन्होंने गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर विवाह में महिलाओं को अपनी पसंद और सहमति का पूर्ण अधिकार दिया(सरस्वती, 2012, समुल्लास–3 पृ. 74–76)। इसको समकालीन राजनीतिक दर्शन में 'चयन की स्वतंत्रता' या 'व्यक्तिगत स्वायत्तता' कहा जाता है।

Received **05 July 2026**; Accepted **27 July 2026**. Available online: **30 July**. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

• **विधवाओं की स्थिति (विधवा–विवाह) :** तत्कालीन समाज में विधवाओं की अमानवीय और दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए उन्होंने वैदिक सिद्धांतों के अनुकूल नियोग और पुनर्विवाह की व्यवस्थाओं का समर्थन किया (सरस्वती, 2012, समुल्लास–4 पृ. 86–92), ताकि स्त्रियों को नारकीय जीवन से मुक्ति मिल सके।

• **सामाजिक सम्मान और धार्मिक अधिकार :** उन्होंने पुरुषों के एकाधिकार को तोड़ते हुए महिलाओं के यज्ञोपवीत संस्कार (जनेऊ धारण करने) और स्वतंत्र रूप से धार्मिक व सामाजिक अनुष्ठानों का नेतृत्व करने के अधिकार को पुनर्जीवित किया। उन्होंने स्त्री को घर के भीतरी और बाहरी निर्णयों में पूर्ण सामाजिक सम्मान और निर्णय लेने की स्वायत्तता प्रदान की (सरस्वती, 2012, समुल्लास–4 पृ. 41–46)।

स्वामी दयानन्द के स्त्री–विमर्श में जैव–राजनीतिक नियमन

स्वामी दयानन्द सरस्वती के चिंतन का एक अत्यंत सूक्ष्म और गहरा पहलू उनकी शारीरिक शुद्धि, मातृत्व और पारिवारिक स्वास्थ्य से जुड़ी संहिताएं हैं, जिन्हें समकालीन राजनीतिक दर्शन में मिशेल फूको के 'जैव–राजनीति' और 'जैव–शक्ति के सिद्धांत' के आलोक में विश्लेषित किया जा सकता है। सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में स्वामी जी ने स्त्री और पुरुष के शारीरिक स्वास्थ्य, जनन प्रक्रियाओं और प्रसवोत्तर स्वास्थ्य के लिए अत्यंत कड़े और वैज्ञानिक नियम प्रतिपादित किए हैं(सरस्वती, 2012, समुल्लास–4 पृ. 92–96)। उदाहरण के लिए, वे प्रसूता (माता) के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए जन्म के केवल 6 दिनों तक ही सीमित स्तनपान का निर्देश देते हैं और उसके तुरंत बाद नवजात के लिए धायी की नियुक्ति तथा औषधियुक्त गाय या बकरी के दूध की वैधानिक व्यवस्था की वकालत करते हैं। इसके पीछे उनका स्पष्ट उद्देश्य माता के शारीरिक क्षय को रोकना और उसे पुनः ऊर्जावान बनाना है। इसके अतिरिक्त, वे प्रसव के उपरांत स्त्री के शारीरिक स्वास्थ्य की पुनर्प्राप्ति के लिए विशिष्ट औषधीय योनिसंकोच प्रक्रियाओं और कम से कम एक मास के अनिवार्य पुरुष–ब्रह्मचर्य (शारीरिक दूरी) का कठोर नियम निर्धारित करते हैं।समकालीन विद्वानों और इतिहासकारों का मानना है कि स्वामी दयानंद सरस्वती ने राष्ट्र–निर्माण की प्रक्रिया में स्त्री की भूमिका को एक नई ऊंचाई दी। स्वामी जी द्वारा सशक्त और संप्रभु राष्ट्र के निर्माण के लिए की गई यह जनसंख्या की एक ऐसी सकारात्मक जैव–राजनीति थी, जो स्त्री के शरीर को केवल एक जनन इकाई नहीं मानती। इसके विपरीत, वह स्त्री को राष्ट्र के भावी स्वतंत्र और कुशल नागरिकों को आकार देने वाली एक संप्रभु जैव–राजनीतिक कर्ता के रूप में स्थापित करती है, जिसके बौद्धिक और शारीरिक सशक्तिकरण पर ही पूरे समाज और राष्ट्र की संप्रभुता टिकी हुई थी (किश्वर, 1986,पृ.9–24, वैदिक, 2020,पृ.35–55)।

राजनीति विज्ञान के दृष्टिकोण से, यह नियमन केवल चिकित्सा शास्त्र का विषय नहीं है यह स्वामी जी द्वारा एक सशक्त और संप्रभु राष्ट्र के निर्माण के लिए की गई 'जनसांख्यिकीय जनरेटिव राजनीति' है। वे स्त्री के शरीर को केवल एक जनन इकाई नहीं मानते, अपित उसको राष्ट्र के भावी स्वतंत्र नागरिकों (नागरिक चेतना) को आकार देने वाली एक संप्रभु जैव–राजनीतिक कर्ता के रूप में स्थापित करते हैं।

राज्य, संप्रभुता और राजधर्म में स्त्री की स्थिति

सत्यार्थ प्रकाश के षष्ठ समुल्लास में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने राजधर्म और राज्य की प्रशासनिक संरचना का जो प्रारूप प्रस्तुत किया है, वह तत्कालीन सामंती व्यवस्था पर एक बड़ा प्रहार था। स्वामी जी ने स्पष्ट रूप से निरंकुश और वंशानुगत राजशाही का विरोध करते हुए त्रिसभात्मक शासन प्रणाली (विद्यार्य सभा, धर्मार्य सभा, और राज्यार्य सभा) का प्रतिपादन किया, जहाँ राजा इन सभाओं के अधीन एक संवैधानिक प्रमुख मात्र है (सरस्वती, 2012, समुल्लास–6 पृ. 105–110)। इस राजनीतिक ढांचे में उन्होंने प्राचीन वैदिक परंपराओं का हवाला देते हुए शासन और विमर्श की प्रक्रियाओं में स्त्रियों की राजनीतिक सहभागिता को सैद्धांतिक रूप से स्वीकार किया। वह बताते हैं कि राजसी और विधायी सभाओं में विदुषी महिलाओं की उपस्थिति न्यायपूर्ण नीति–निर्माण के लिए अनिवार्य है। स्वामी जी का संप्रभुता का सिद्धांत अत्यंत लोककल्याणकारी था, जिसमें वह कहते हैं कि 'प्रजा का पालन करना और उसे न्याय देना ही राजा का परम धर्म है जो राजा प्रजा को सताता है, वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता

Received **05 July 2026**; Accepted **27 July 2026**. Available online: **30 July**. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

है।' इसके अतिरिक्त, युद्ध और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के नियमों की व्याख्या करते हुए स्वामी जी ने एक अत्यंत प्रगतिशील दृष्टिकोण रखा। उन्होंने प्राचीन मध्यकालीन युद्ध–नीतियों (जहाँ विजित राज्य की स्त्रियों को संपत्ति या दासी के रूप में लूट लिया जाता था) का कड़ा निषेध किया। उनके अनुसार, युद्ध केवल दो सेनाओं या शासकों के मध्य होता है पराजित राज्य की स्त्रियाँ, बच्चे और निहत्थे नागरिक पूर्णतः अभेद्य और गरिमा के अधिकारी हैं, और उनके मानवाधिकारों की रक्षा करना विजयी राजा का सैद्धांतिक कर्तव्य है (सरस्वती, 2012, समुल्लास–6 पृ.144–147)।

तुलनात्मक राजनीतिक विमर्श एवं अंतर्विरोध

स्वामी दयानन्द सरस्वती के स्त्री–विमर्श को समकालीन भारतीय समाज सुधारकों के परिप्रेक्ष्य में रखकर देखना अत्यंत आवश्यक है। जहाँ एक ओर राजा राममोहन राय का पूरा आंदोलन ब्रिटिश वैधानिक हस्तक्षेप और उदारवादी पाश्चात्य न्यायशास्त्र पर बहुत हद तक निर्भर था, वहीं स्वामी दयानन्द ने अपनी पूरी वैचारिकी को वि–औपनिवेशीकृत रखते हुए विशुद्ध स्वदेशी वैदिक धरातल पर खड़ा किया। इसी प्रकार, ज्योतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले का स्त्री–विमर्श मूलतः जाति–विरोधी संघर्ष और सामाजिक संरचना के समूल विनाश से उपजा था, जबकि दयानन्द ने समाज को तोड़े बिना, वर्ण–व्यवस्था को जन्म के बजाय गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर पुनर्गठित करके स्त्रियों को उनका पुराना गौरवशाली स्थान दिलाना चाहा। पंडिता रमाबाई और ताराबाई शिंदे जैसी प्रखर नारीवादी विचारकों ने हिंदू धर्मशास्त्रों की पुरुष–सत्तात्मक प्रकृति पर जो गंभीर आक्षेप लगाए थे, स्वामी दयानन्द का चिंतन उन आक्षेपों का एक दार्शनिक उत्तर प्रस्तुत करता है। पंडिता रमाबाई ने अपनी कालजयी कृति 'द हाई कास्ट हिंदू वीमेन' (1887) में जिस वैधानिक अधीनता का वर्णन किया है, दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के माध्यम से उस अधीनता के धार्मिक आधारों को ही अवैध घोषित कर दिया।

सारणी 1 : विभिन्न समाज सुधारकों के वैचारिक प्रतिमानों का तुलनात्मक ढांचा

सुधारक विचारक	वैचारिक मूलाधार	स्त्री–स्वतंत्रता का मुख्य उपकरण	राज्य और कानून से अपेक्षा	दार्शनिक सीमा अंतर्विरोध
राजा राममोहन राय	पश्चिमी आधुनिकता एवं उपनिषदीय एकेश्वरवाद	वैधानिक सुधार एवं सती–प्रथा उन्मूलन	ब्रिटिश औपनिवेशिक कानूनों द्वारा सामाजिक सुधार	आंतरिक पारिवारिक संरचना और पितृसत्तात्मक विवाह नियमों पर मौन
ज्योतिराव फूले एवं सावित्रीबाई फूले	ब्राह्मणवादी सत्ता का विरोध एवं समतावाद	शूद्र–अतिशूद्र व बालिका शिक्षा, सत्यशोधक समाज	राज्य द्वारा सार्वभौमिक और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा	धार्मिक ग्रंथों के भीतर सुधार की संभावना को पूरी तरह नकार देना
पंडिता रमाबाई	ईसाई अध्यात्म एवं प्रारंभिक भारतीय नारीवाद	महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता और आश्रय स्थल	महिलाओं के लिए पृथक वैधानिक व सामाजिक अधिकार	हिंदू सामाजिक संरचना से पूर्ण मोहभंग और धर्म–परिवर्तन की अनिवार्यता।
ताराबाई शिंदे	प्रखर स्त्री–पुरुष तुलनात्मक विमर्श	पुरुष–सत्तात्मक पाखंड का तार्किक खंडन	सामाजिक नैतिकता में आमूल–चूल परिवर्तन की मांग	किसी वैकल्पिक संस्थागत या संगठनात्मक ढांचे का अभाव
स्वामी दयानन्द सरस्वती	वेदों की सर्वोच्चता और सार्वभौमिकता	गुरुकुल प्रणाली, वेदाध्ययन, अनिवार्य शारीरिक व बौद्धिक नियमन	त्रिसभात्मक संप्रभु व्यवस्था और नैतिक राजधर्म का प्रवर्तन	वैदिक संहिताओं की व्याख्या में अत्यधिक कठोरता और मध्यकालीन वास्तविकताओं से टकराव।

समकालीन प्रासंगिकता

स्वामी दयानन्द सरस्वती का स्त्री–विषयक चिंतन केवल 19वीं शताब्दी का ऐतिहासिक दस्तावेज नहीं है, बल्कि

Received 05 July 2026; Accepted 27 July 2026. Available online: 30 July. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

वर्तमान भारतीय समाज में उसकी गहरी वैचारिक गूँज और प्रासंगिकता दिखाई देती है, जिनमें प्रमुख हैं :

- **राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020):** स्वामी जी द्वारा प्रतिपादित बालिकाओं के लिए अनिवार्य, मूल्य–आधारित और समान शिक्षा का प्रारूप आज की शिक्षा नीति के जेंडर इंक्लूजन फंड और महिला शिक्षा के लक्ष्यों के समानांतर दिखाई देता है।

- **महिला सशक्तिकरण और संवैधानिक समानता :** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 (समानता का अधिकार), अनुच्छेद 15 (लिंग के आधार पर भेदभाव का निषेध) और विधायी निकायों में महिलाओं को मिलने वाला आरक्षण (नारी शक्ति वंदन अधिनियम) जैसे समकालीन विषय स्वामी जी के वैदिक समता के सिद्धांतों का ही आधुनिक संवैधानिक व वैधानिक विस्तार हैं।

- **सतत विकास लक्ष्य :** संयुक्त राष्ट्र संघ का सतत विकास लक्ष्य–5 जो लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण की बात करता है, उसकी दार्शनिक और नैतिक जड़ें स्वामी जी के सामाजिक समरसता और अधिकारों के विमर्श में बहुत पहले ही देखी जा सकती हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने स्त्री–स्वतंत्रता को मध्यकालीन कुरीतियों के उन्मूलन के संदर्भ में देखने के साथ–साथ उसे मौलिक वैदिक सिद्धांतों, नैतिक स्वायत्तता तथा मानवीय गरिमा के आधार पर पुनर्परिभाषित किया। उन्होंने स्त्री को अनिवार्य शिक्षा, गंभीर धार्मिक अध्ययन, व्यापक सामाजिक सहभागिता तथा आत्मनिर्णय (वैवाहिक स्वायत्तता) का अधिकार प्रदान करने की पुरजोर वकालत करते हुए यह अकाट्य रूप से स्थापित किया कि स्त्री और पुरुष दोनों समाज रूपी संरचना के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। विशुद्ध राजनीतिक दृष्टि से दयानन्द सरस्वती का चिंतन समता, न्याय, अधिकार तथा सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे आधुनिक लोकतांत्रिक मूल्यों को वैचारिक रूप से सुदृढ़ करता है। दयानंद जी ने समकालीन पाश्चात्य राजनीतिक अधिकारों की शब्दावली का प्रत्यक्ष प्रयोग नहीं किया, फिर भी उनके विचार स्त्री की गरिमा, समान अवसर और सक्रिय सामाजिक सहभागिता के पक्ष में एक अत्यंत सशक्त वैधानिक और नैतिक आधार प्रस्तुत करते हैं। इस दृष्टि से उनका यह चिंतन आधुनिक भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तिकरण, विधायी प्रतिनिधित्व और लैंगिक न्याय की समकालीन अवधारणाओं के साथ पूर्णतः प्रासंगिक प्रतीत होता है।

अतः समग्रतः यह कहा जा सकता है कि स्वामी दयानन्द सरस्वती की स्त्री–विषयक विचारधारा में पारंपरिक धार्मिक पुनरुत्थान, सामाजिक सुधार के साथ–साथ स्त्री–स्वतंत्रता का एक व्यापक, दूरगामी और संस्थागत राजनीतिक आयाम भी अंतर्निहित था। यही कारण है कि उनके विचारों का राजनीति–शास्त्रीय दृष्टिकोण से किया गया यह राजनीतिक पुनर्पाठ समकालीन लैंगिक समानता, मानवाधिकारों तथा लोकतांत्रिक समावेशन के वैश्विक विमर्श को एक नई, मौलिक और सशक्त वैचारिक दिशा प्रदान करने की पूर्ण क्षमता रखता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

अग्रवाल, एस., एवं यादव, एच. (2025). एन एनालिटिकल एक्सप्लोरेशन ऑफ स्वामी दयानन्द सरस्वतीज एजुकेशनल थॉट एंड सोशल जस्टिस. द एकेडमिक जर्नल, 3(7), 1407–1412.

अम्बेडकर, बी. आर. (1942). प्रोग्रेस ऑफ द कम्युनिटी इज मेजर्ड बाय प्रोग्रेस ऑफ द वूमेन (स्पेशल अड्रेस एट द ऑल–इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेज वूमेन्स कॉन्फ्रेंस, नागपुर, जुलाई 20, 1942). डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरः राइटिंग्स एंड स्पीचेज (वॉल्यूम 17, पार्ट 3, पृ. 306–316). गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र.

अल्तेकर ए एस (1956). द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिंदू सिविलाइजेशन . मोतीलाल बनारसी दा

किश्वर, एम. (1986). द डॉटर ऑफ आर्यवर्त . इंडियन इकोनॉमिक्स एंड सोशल हिस्ट्री रिव्यू , 23(2), 151–186. https://doi.org/10.1177/001946468602300202

Received 05 July 2026; Accepted 27 July 2026. Available online: 30 July. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

Integral Research
(ISSN: 3048-5991) Coden: IRABCA
Research Article
(Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal)
Journal home page: https://integralresearch.in/
Vol. 03, No. 07, July. 2026

गांधी, एम. के. (1965). द कलेक्ट वर्क ऑफ महात्मा गांधी (वॉल्यूम 15). द पब्लिकेशन डिविजन,गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (ओरिजिनल वर्क पब्लिश्ड 1919).

चन्द्रा, बी. (2009). हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न इंडिया . ओरिएंट ब्लैकस्वान.

जॉर्डेंस, जे. टी. एफ. (1978). दयानन्द सरस्वती : हिज लाइफ एंड आइडियाज. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

नुसबाम, एम. सी. (2000). वीमेन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट : द कैपेबिलिटीज अप्रोच. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

फोर्ब्स, जी. (1996). वीमेन इन मॉडर्न इंडिया. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

शर्मा, एम. (2021). फेमिनिस्ट डिस्कोर्स एंड द कंटेंपरेरी रिलेवेंस ऑफ दयानन्द. एजुकेशनल एडमिनिस्ट्रेशनः थिअरी एंड प्रैक्टिस, 27(4), 1439–1441.

मिल, जे. एस. (1869). द सबजेक्शन ऑफ वीमेन. लॉन्गमैन्स, ग्रीन, रीडर एंड डायर.

वैदिक, अपर्णा. (2020). माय सन्स इनहेरिटेंसः ए सीक्रेट हिस्ट्री ऑफ लिंचिंग एंड ब्लड जस्टिस इन इंडिया. अलेफ बुक कंपनी.

सक्सेना, एम. (2014). व्यूज ऑफ दयानन्द एंड विवेकानन्द फॉर वीमेन एजुकेशन. क्वेस्ट जर्नल्स ऑफ रिसर्च इन ह्यूमेनिटीज एंड सोशल साइंस, 2(11), 81–82.

सरस्वती, स्वामी दयानन्द. (2012). सत्यार्थ प्रकाश (द लाइट ऑफ ट्रुथ). वैदिक यंत्रालय.(ओरिजिनल वर्क पब्लिश्ड 1875). .

सरस्वती, स्वामी दयानन्द. (1970). ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका. वैदिक यंत्रालय (ओरिजिनल वर्क पब्लिश्ड 1878). .

सिंह, जी. के., एवं राणा, सी. (2024). स्वामी दयानन्द सरस्वती : ए पायनियर ऑफ सोशल हार्मनी. इंटीग्रल रिसर्च. 1(8). 212–217. DOI: 10.57067/ir.v1.i8.335

Received **05 July 2026**; Accepted **27 July 2026**. Available online: **30 July**. Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License